२. निराला भाई

– महादेवी वर्मा

लेखक परिचय : श्रीमती महादेवी वर्मा जी का जन्म २६ मार्च १९०७ को उत्तर प्रदेश के फर्रुखाबाद में हुआ । हिंदी साहित्य जगत में आप चर्चित एवं प्रतिभाशाली कवयित्री के रूप में प्रतिष्ठित हैं । आप जितनी सिद्धहस्त कवयित्री के रूप में चर्चित हैं उतनी ही सफल गद्यकार के रूप में भी विख्यात हैं । आप छायावादी युग की प्रमुख स्तंभ हैं । आपके लिखे रेखाचित्र काव्यसौंदर्य की अनुभूति तो कराते ही हैं; साथ-साथ सामाजिक स्थितियों पर चोट भी करते हैं । इसलिए वे काव्यात्मक रेखाचित्र हमारे मन पर अमिट प्रभाव अंकित कर जाते हैं । कवि 'निराला' ने आपको 'हिंदी के विशाल मंदिर की सरस्वती' कहा है तो हिंदी के कुछ आलोचकों ने 'आधुनिक मीरा' उपाधि से संबोधित किया है । आपका निधन १९८७ में हुआ ।

प्रमुख कृतियाँ : 'नीहार', 'रश्मि', 'नीरजा', 'दीपशिखा', 'सांध्यगीत', 'यामा' (कविता संग्रह), 'अतीत के चलचित्र', 'स्मृति की रेखाएँ', 'मेरा परिवार' (रेखाचित्र), 'शृंखला की कड़ियाँ', 'साहित्यकार की आस्था' (निबंध) आदि ।

विधा परिचय : आधुनिक हिंदी गद्य साहित्य में 'संस्मरण' विधा अपना विशिष्ट स्थान रखती है । हमारे जीवन में आए किसी व्यक्ति के स्वाभाविक गुणों से अथवा उसके साथ घटित प्रसंगों से हम प्रभावित हो जाते हैं । उन प्रसंगों को शब्दांकित करने की इच्छा होती है । स्मृति के आधार पर उस व्यक्ति के संबंध में लिखित लेख या ग्रंथ को संस्मरण साहित्य कहते हैं ।

पाठ परिचय : 'निराला' हिंदी साहित्य में छायावादी कवि और क्रांतिकारी व्यक्तित्व के रूप में जाने जाते हैं । वे आजीवन फक्कड़ बने रहे, निर्धनता में जीवनयापन करते रहे तथा दूसरों के आर्थिक दुखों का बोझ स्वयं ढोते रहे । उन्होंने परिवार के सदस्यों के वियोग की व्यथा को सहा, उसे काव्य में उतारा । आतिथ्य करने में उनका अपनापन देखते ही बनता था । अपने समकालीन रचनाकारों के प्रति उनकी चिंता उनकी संवेदनशीलता को रेखांकित करती है । उनका व्यक्तित्व लोहे के समान दृढ़ था तो हृदय भाव तरलता से ओतप्रोत था । वे मानवता के पुजारी थे । इन्हीं गुणों को लेखिका ने शब्दांकित किया है ।

एक युग बीत जाने पर भी मेरी स्मृति से एक घटा भरी अश्रुमुखी सावनी पूर्णिमा की रेखाएँ नहीं मिट सकी हैं । उन रेखाओं के उजले रंग न जाने किस व्यथा से गीले हैं कि अब तक सूख भी नहीं पाए, उड़ना तो दूर की बात है ।

उस दिन मैं बिना कुछ सोचे हुए ही भाई निराला जी से पूछ बैठी थी, 'आपको किसी ने राखी नहीं बाँधी ?' अवश्य ही उस समय मेरे सामने उनकी बंधनशून्य कलाई और पीले कच्चे सूत की ढेरों राखियाँ लेकर घूमने वाले यजमान-खोजियों का चित्र था । पर अपने प्रश्न के उत्तर ने मुझे क्षण भर के लिए चौंका दिया ।

'कौन बहिन हम जैसे भुक्खड़ को भाई बनावेगी !' में उत्तर देने वाले के एकाकी जीवन की व्यथा थी या चुनौती, यह कहना कठिन है पर जान पड़ता है कि किसी अव्यक्त चुनौती के आभास ने ही मुझे उस हाथ के अभिषेक की प्रेरणा दी, जिसने दिव्य वर्ण-गंध मधुवाले गीत सुमनों से भारती की अर्चना भी की है और बर्तन माँजने, पानी भरने जैसी कठिन श्रमसाधना से उत्पन्न स्वेद बिंदुओं से मिट्टी का शृंगार भी किया है ।

दिन-रात के पगों से वर्षों की सीमा पार करने वाले अतीत ने आग के अक्षरों में आँसू के रंग भर-भरकर ऐसी अनेक चित्रकथाएँ आँक डाली हैं, जितनी इस महान कवि और असाधारण मानव के जीवन की मार्मिक झाँकी मिल सकती है पर उन सबको सँभाल सके; ऐसा एक चित्राधार पा लेना सहज नहीं ।

उनके अस्त-व्यस्त जीवन को व्यवस्थित करने के असफल प्रयासों का स्मरण कर मुझे आज भी हँसी आ जाती है । एक बार अपनी निर्बंध उदारता की तीव्र आलोचना सुनने के बाद उन्होंने व्यवस्थित रहने का वचन दिया ।

संयोग से तभी उन्हें कहीं से तीन सौ रुपये मिल गए । वही पूँजी मेरे पास जमा करके उन्होंने मुझे अपने खर्च का बजट बना देने का आदेश दिया । जिन्हें मेरा व्यक्तिगत हिसाब रखना पड़ता है, वे जानते हैं कि यह कार्य मेरे लिए कितना दुष्कर है । न वे मेरी चादर लंबी कर पाते हैं; न मुझे पैर सिकोड़ने पर बाध्य कर सकते हैं; और इस प्रकार एक विचित्र रस्साकशी में तीस दिन बीतते रहते हैं ।

पर यदि अनुत्तीर्ण परीक्षार्थियों की प्रतियोगिता हो तो सौ में दस अंक पाने वाला भी अपने-आपको शून्य पाने वाले से श्रेष्ठ मानेगा ।

अस्तु, नमक से लेकर नापित तक और चप्पल से लेकर मकान के किराये तक का जो अनुमानपत्र मैंने बनाया; वह जब निराला जी को पसंद आ गया, तब पहली बार मुझे अपने अर्थशास्त्र के ज्ञान पर गर्व हुआ । पर दूसरे ही दिन से मेरे गर्व की व्यर्थता सिद्ध होने लगी । वे सवेरे ही पहुँचे । पचास रुपये चाहिए... किसी विद्यार्थी का परीक्षा शुल्क जमा करना है, अन्यथा वह परीक्षा में नहीं बैठ सकेगा । संध्या होते-होते किसी साहित्यिक मित्र को साठ देने की आवश्यकता पड़ गई । दूसरे दिन लखनऊ के किसी ताँगेवाले की माँ को चालीस का मनीऑर्डर करना पड़ा । दोपहर को किसी दिवंगत मित्र की भतीजी के विवाह के लिए सौ देना अनिवार्य हो गया । सारांश यह कि तीसरे दिन उनका जमा किया हुआ रुपया समाप्त हो गया और तब उनके व्यवस्थापक के नाते यह दान खाता मेरे हिस्से आ पड़ा ।

एक सप्ताह में मैंने समझ लिया कि यदि ऐसे औढरदानी को न रोका जावे तो यह मुझे भी अपनी स्थिति में पहुँचाकर दम लेंगे । तब से फिर कभी उनका बजट बनाने का दुस्साहस मैंने नहीं किया ।

बड़े प्रयत्न से बनवाई रजाई, कोट जैसी नित्य व्यवहार की वस्तुएँ भी जब दूसरे ही दिन किसी अन्य का कष्ट दूर करने के लिए अंतर्धान हो गईं तब अर्थ के संबंध में क्या कहा जावे, जो साधन मात्र है । वह संध्या भी मेरी स्मृति में विशेष महत्त्व रखती है जब श्रद्धेय मैथिलीशरण जी निराला जी का आतिथ्य ग्रहण करने गए ।

बगल में गुप्त जी के बिछौने का बंडल दबाए, दियासलाई के क्षण प्रकाश, क्षीण अंधकार में तंग सीढ़ियों का मार्ग दिखाते हुए निराला जी हमें उस कक्ष में ले गए जो उनकी कठोर साहित्य साधना का मूक साक्षी रहा है ।

आले पर कपड़े की आधी जली बत्ती से भरा पर तेल से खाली मिट्टी का दीया मानो अपने नाम की सार्थकता के लिए जल उठने का प्रयास कर रहा था ।

वह आलोकरहित, सुख-सुविधाशून्य घर, गृहस्वामी के विशाल आकार और उससे भी विशालतर आत्मीयता से भरा हुआ था । अपने संबंध में बेसुध निराला जी अपने अतिथि की सुविधा के लिए सतर्क प्रहरी हैं । अतिथि की सुविधा का विचार कर वे नया घड़ा खरीदकर गंगाजल ले आए और धोती-चादर जो कुछ घर में मिल सका; सब तख्त पर बिछाकर उन्हें प्रतिष्ठित किया ।

तारों की छाया में उन दोनों मर्यादावादी और विद्रोही महाकवियों ने क्या कहा-सुना, यह मुझे ज्ञात नहीं पर सवेरे गुप्त जी को ट्रेन में बैठाकर वे मुझे उनके सुख शयन का समाचार देना न भूले ।

ऐसे अवसरों की कमी नहीं जब वे अकस्मात पहुँचकर कहने लगे-मेरे इक्के पर कुछ लकड़ियाँ, थोड़ा घी आदि रखवा दो । अतिथि आए हैं, घर में सामान नहीं है ।

उनके अतिथि यहाँ भोजन करने आ जावें, सुनकर उनकी दृष्टि में बालकों जैसा विस्मय छलक आता है । जो अपना घर समझकर आए हैं, उनसे यह कैसे कहा जावे कि उन्हें भोजन के लिए दूसरे घर जाना होगा ।

भोजन बनाने से लेकर जूठे बर्तन माँजने तक का काम वे अपने अतिथि देवता के लिए सहर्ष करते हैं । आतिथ्य की दृष्टि से निराला जी में वही पुरातन संस्कार है, जो इस देश के ग्रामीण किसान में मिलता है ।

उनकी व्यथा की सघनता जानने का मुझे एक अवसर मिला है । श्री सुमित्रानंदन दिल्ली में टाईफाइड ज्वर से पीड़ित थे । इसी बीच घटित को साधारण और अघटित को समाचार मानने वाले किसी समाचारपत्र ने उनके स्वर्गवास की झूठी खबर छाप डाली ।

निराला जी कुछ ऐसी आकस्मिकता के साथ आ पहुँचे थे कि मैं उनसे यह समाचार छिपाने का भी अवकाश न पा सकी । समाचार के सत्य में मुझे विश्वास नहीं था पर निराला जी तो ऐसे अवसर पर तर्क की शक्ति ही खो बैठते हैं । लड़खड़ाकर सोफे पर बैठ गए और किसी अव्यक्त वेदना की तरंग के स्पर्श से मानो पाषाण में परिवर्तित होने लगे । उनकी झुकी पलकों से घुटनों पर चूनेवाली आँसू की बूँदें बीच में ऐसे चमक जाती थीं मानो प्रतिमा से झड़े जूही के फूल हों ।

स्वयं अस्थिर होने पर भी मुझे निराला जी को सांत्वना देने के लिए स्थिर होना पड़ा । यह सुनकर कि मैंने ठीक समाचार जानने के लिए तार दिया है, वे व्यथित प्रतीक्षा की मुद्रा में तब तक बैठे रहे जब तक रात में मेरा फाटक बंद होने का समय न आ गया ।

सवेरे चार बजे ही फाटक खटखटाकर जब उन्होंने तार के उत्तर के संबंध में पूछा तब मुझे ज्ञात हुआ कि वे रात भर पार्क में खुले आकाश के नीचे ओस से भीगी दूब पर बैठे सवेरे की प्रतीक्षा करते रहे हैं । उनकी निस्तब्ध पीड़ा जब

कुछ मुखर हो सकी, तब वे इतना ही कह सके, 'अब हम भी गिरते हैं । पंत के साथ तो रास्ता कम अखरता था, पर अब सोचकर ही थकावट होती है ।'

पुरस्कार में मिले धन का कुछ अंश भी क्या वे अपने उपयोग में नहीं ला सकते; पूछने पर उसी सरल विश्वास के साथ कहते, 'वह तो संकल्पित अर्थ है । अपने लिए उसका उपयोग करना अनुचित होगा ।'

उन्हें व्यवस्थित करने के सभी प्रयास निष्फल रहे हैं पर आज मुझे उनका खेद नहीं है । यदि वे हमारे कल्पित साँचे में समा जाएँ तो उनकी विशेषता ही क्या रहे ।

उनकी अपरिग्रही वृत्ति के संदर्भ में बातें हो रही थीं तब वसंत ने परिहास की मुद्रा में कहा, 'तब तो आपको मधुकरी खाने की आवश्यकता पड़ेगी ।'

खेद, अनुताप या पश्चाताप की एक भी लहर से रहित विनोद की एक प्रशांत धारा पर तैरता हुआ निराला जी का उत्तर आया, 'मधुकरी तो अब भी खाते हैं ।' जिसकी निधियों से साहित्य का कोष समृद्ध है; उसने मधुकरी माँगकर जीवननिर्वाह किया है, इस कटु सत्य पर आने वाले युग विश्वास कर सकेंगे, यह कहना कठिन है ।

गेरू में दोनों मलिन अधोवस्त्र और उत्तरीय कब रंग डाले गए; इसका मुझे पता नहीं पर एकादशी के सवेरे स्नान,

हवन आदि कर जब वे निकले तब गैरिक परिधान पहन चुके थे । अंगोछे के अभाव और वस्त्रों में रंग की अधिकता के कारण उनके मुँह-हाथ आदि ही नहीं, विशाल शरीर भी गैरिक हो गया था, मानो सुनहली धूप में धुला गेरू के पर्वत का कोई शिखर हो ।

बोले, 'अब ठीक है । जहाँ पहुँचे, किसी नीम-पीपल के नीचे बैठ गए । दो रोटियाँ माँगकर खा लीं और गीत लिखने लगे ।'

इस सर्वथा नवीन परिच्छेद का उपसंहार कहाँ और कैसे होगा; यह सोचते-सोचते मैंने उत्तर दिया, 'आपके संन्यास से मुझे तो इतना ही लाभ हुआ कि साबुन के कुछ पैसे बचेंगे । गेरुए वस्त्र तो मैले नहीं दीखेंगे । पर हानि यही है कि न जाने कहाँ-कहाँ छप्पर डलवाना पड़ेगा क्योंकि धूप और वर्षा से पूर्णतया रक्षा करने वाले नीम और पीपल कम ही हैं ।' मन में एक प्रश्न बार-बार उठता है... क्या इस देश की सरस्वती अपने वैरागी पुत्रों की परंपरा अक्षुण्ण रखना चाहती है और क्या इस पथ पर पहले पग रखने की शक्ति उसने निराला जी में ही पाई है?

निराला जी अपने शरीर, जीवन और साहित्य सभी में असाधारण हैं । उनमें विरोधी तत्त्वों की भी सामंजस्यपूर्ण संधि है । उनका विशाल डीलडौल देखने वाले के हृदय में जो आतंक उत्पन्न कर देता है उसे उनके मुख की सरल आत्मीयता दूर करती चलती है ।

सत्य का मार्ग सरल है । तर्क और संदेह की चक्करदार राह से उस तक पहुँचा नहीं जा सकता । इसी से जीवन के सत्य द्रष्टाओं को हम बालकों जैसा सरल विश्वासी पाते हैं । निराला जी भी इसी परिवार के सदस्य हैं ।

किसी अन्याय के प्रतिकार के लिए उनका हाथ लेखनी से पहले उठ सकता है अथवा लेखनी हाथ से अधिक कठोर प्रहार कर सकती है पर उनकी आँखों की स्वच्छता किसी मलिन द्वेष में तरंगायित नहीं होती ।

ओंठों की खिंची हुई-सी रेखाओं में निश्चय की छाप है पर उनमें क्रूरता की भंगिमा या घृणा की सिकुड़न नहीं मिल सकती ।

क्रूरता और कायरता में वैसा ही संबंध है जैसा वृक्ष की जड़ में अव्यक्त रस और उसके फल के व्यक्त स्वाद में । निराला किसी से भयभीत नहीं, अत: किसी के प्रति क्रूर होना उनके लिए संभव नहीं । उनके तीखे व्यंग्य की विद्युतरेखा के पीछे सद्भाव के जल से भरा बादल रहता है ।

निराला जी विचार से क्रांतदर्शी और आचरण से क्रांतिकारी हैं । वे उस झंझा के समान हैं जो हल्की वस्तुओं के साथ भारी वस्तुओं को भी उड़ा ले जाती है । उस मंद समीर जैसी नहीं जो सुगंध न मिले तो दुर्गंध का भार ही ढोता फिरता है । जिसे वे उपयोगी नहीं मानते; उसके प्रति उनका किंचित मात्र भी मोह नहीं, चाहे तोड़ने योग्य वस्तुओं के साथ रक्षा के योग्य वस्तुएँ भी नष्ट हो जाएँ ।

उनका विरोध द्वेषमूलक नहीं पर चोट कठिन होती है । इसके अतिरिक्त उनके संकल्प और कार्य के बीच में ऐसी प्रत्यक्ष कड़ियाँ नहीं रहतीं, जो संकल्प के औचित्य और कर्म के सौंदर्य की व्याख्या कर सकें । उन्हें समझने के लिए जिस मात्रा में बौद्धिकता चाहिए; उसी मात्रा में हृदय की संवेदनशीलता अपेक्षित है । ऐसा संतुलन सुलभ न होने के कारण उन्हें पूर्णता में समझने वाले विरले मिलते हैं ।

ऐसे दो व्यक्ति सब जगह मिल सकते हैं जिनमें एक उनकी नम्र उदारता की प्रशंसा करते नहीं थकता और दूसरा उनके उद्धत व्यवहार की निंदा करते नहीं हारता । जो अपनी चोट के पार नहीं देख पाते, वे उनके निकट पहुँच ही नहीं सकते । उनके विद्रोह की असफलता प्रमाणित करने के लिए उनके चरित्र की उजली रेखाओं पर काली तूली फेरकर प्रतिशोध लेते रहते हैं । निराला जी के संबंध में फैली हुई भ्रांत किंवदंतियाँ इसी निम्न वृत्ति से संबंध रखती हैं ।

मनुष्य जाति की नासमझी का इतिहास क्रूर और लंबा है । प्राय: सभी युगों में मनुष्य ने अपने में श्रेष्ठता पर समझ में आने वाले व्यक्ति को छाँटकर, कभी उसे विष देकर, कभी सूली पर चढ़ाकर और कभी गोली का लक्ष्य बनाकर अपनी बर्बर मूर्खता के इतिहास में नये पृष्ठ जोड़े हैं ।

प्रकृति और चेतना न जाने कितने निष्फल प्रयोगों के उपरांत ऐसे मनुष्य का सृजन कर पाती हैं, जो अपने स्रष्टाओं से श्रेष्ठ हो पर उसके सजातीय ऐसे अद्भुत सृजन को नष्ट करने के लिए इससे बड़ा कारण खोजने की भी आवश्यकता नहीं समझते कि वह उनकी समझ के परे है अथवा उसका सत्य इनकी भ्रांतियों से मेल नहीं खाता ।

निराला जी अपने युग की विशिष्ट प्रतिभा हैं । अत: उन्हें अपने युग का अभिशाप झेलना पड़े तो आश्चर्य नहीं । उनके जीवन के चारों ओर परिवार का वह लौहसार घेरा नहीं

है जो व्यक्तिगत विशेषताओं पर चोट भी करता है और बाहर की चोटों के लिए ढाल भी बन जाता है । उनके निकट माता, बहन, भाई आदि के कोंपल उनके लिए पत्नी वियोग के पतझड़ बन गए हैं । आर्थिक कारणों ने उन्हें अपनी मातृहीन संतान के प्रति कर्तव्य निर्वाह की सुविधा भी नहीं दी । पुत्री के अंतिम क्षणों में वे निरुपाय दर्शक रहे और पुत्र को उचित शिक्षा से वंचित रखने के कारण उसकी उपेक्षा के पात्र बने ।

अपनी प्रतिकूल परिस्थितियों से उन्होंने कभी ऐसी हार नहीं मानी जिसे सह्य बनाने के लिए हम समझौता करते हैं । स्वभाव से उन्हें यह निश्छल वीरता मिली है जो अपने बचाव के प्रयत्न को भी कायरता की संज्ञा देती है । उनकी राजनैतिक कुशलता नहीं, वह तो साहित्य की एकनिष्ठता का पर्याय है । छल के व्यूह में छिपकर लक्ष्य तक पहुँचने को साहित्य लक्ष्य प्राप्ति नहीं मानता जो अपने पथ की सभी प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष बाधाओं को चुनौती देता हुआ, सभी आघातों को हृदय पर झेलता हुआ लक्ष्य तक पहुँचता है । उसी को युगस्रष्टा साहित्यकार कह सकते हैं । निराला जी ऐसे ही विद्रोही साहित्यकार हैं । जिन अनुभवों के दंशन का विष साधारण मनुष्य की आत्मा को मूर्च्छित करके उसके सारे जीवन को विषाक्त बना देता है, उसी से उन्होंने सतत जागरूकता और मानवता का अमृत प्राप्त किया है ।

उनके जीवन पर संघर्ष के जो आघात हैं; वे उनकी हार के नहीं, शक्ति के प्रमाणपत्र हैं । उनकी कठोर श्रम, गंभीर दर्शन और सजग कला की त्रिवेणी न अछोर मरु में सूखती है; न अकूल समुद्र में अस्तित्व खोती है । जीवन की दृष्टि से निराला जी किसी दुर्लभ सीप में ढले सुडौल मोती नहीं हैं, जिसे अपनी महार्घता का साथ देने के लिए स्वर्ण और सौंदर्य प्रतिष्ठा के लिए अलंकार का रूप चाहिए ।

वे तो अनगढ़ पारस के भारी शिलाखंड हैं । वह जहाँ है; वहाँ उसका स्पर्श सुलभ है । यदि स्पर्श करने वाले में मानवता के लौह परमाणु हैं तो किसी और से भी स्पर्श करने पर वह स्वर्ण बन जाएगा । पारस की अमूल्यता दूसरों का मूल्य बढ़ाने में है । उसके मूल्य में न कोई कुछ जोड़ सकता है, न घटा सकता है ।

आज हम दंभ और स्पर्धा, अज्ञान और भ्रांति की ऐसी कुहेलिका में चल रहे हैं जिसमें स्वयं को पहचानना तक कठिन है, सहयात्रियों को यथार्थता में जानने का प्रश्न नहीं उठता । पर आने वाले युग इस कलाकार की एकाकी यात्रा का मूल्य आँक सकेंगे, जिसमें अपने पैरों की चाप तक आँधी में खो जाती है ।

निराला जी के साहित्य की शास्त्रीय विवेचना तो आगामी युगों के लिए सुकर रहेगी, पर उस विवेचना के लिए जीवन की जिस पृष्ठभूमि की आवश्यकता होती है, उसे तो उनके समकालीन ही दे सकते हैं ।

साहित्य के नवीन युगपथ पर निराला जी की अंक संसृति गहरी और स्पष्ट, उज्ज्वल और लक्ष्यनिष्ठ रहेगी । इस मार्ग के हर फूल पर उनके चरण का चिह्न और हर शूल पर उनके रक्त का रंग है ।

('संस्मरण' संग्रह से)

—— o ——

शब्दार्थ

भुक्खड़ = जिसके पास कुछ न हो, कंगाल
औढरदानी = अत्यंत उदारतापूर्वक दान करने वाला
अक्षुण्ण = अखंडित
लौहसार = लोहे का कठघरा
अछोर = ओर-छोर रहित, असीम
महार्घ = बहुमूल्य
कुहेलिका = कोहरा, धुँध
नापित = नाई
मधुकरी = भोजन की भिक्षा
डीलडौल = कदकाठी
कोंपल = नई पत्ती
अकूल = बिना किनारेवाला
अनगढ़ = जिसे व्यवस्थित गढ़ा न गया हो
संसृति = संसार, सृष्टि

स्वाध्याय

आकलन

१. लिखिए :–

(अ) लेखिका के पास रखे तीन सौ रुपये इस प्रकार समाप्त हो गए :

(१) .....

(२) .....

(३) .....

(४) .....

(आ) अतिथि की सुविधा हेतु निराला जी ये चीजें ले आए :

(१) ..... (२) .....

(३) ..... (४) .....

शब्द संपदा

२. निम्न शब्दों के समानार्थी शब्द लिखिए :

(१) प्रहरी – ..... (२) अतिथि – .....

(३) प्रयास – ..... (४) स्मृति – .....

अभिव्यक्ति

३. (अ) 'भाई–बहन का रिश्ता अनूठा होता है', इस विषय पर अपना मत लिखिए।

(आ) 'सभी का आदरपात्र बनने के लिए व्यक्ति का सहृदयी और संस्कारशील होना आवश्यक है', इस कथन पर अपने विचार लिखिए।

पाठ पर आधारित लघूत्तरी प्रश्न

४. (अ) निराला जी की चारित्रिक विशेषताएँ लिखिए।

(आ) निराला जी का आतिथ्य भाव स्पष्ट कीजिए।

साहित्य संबंधी सामान्य ज्ञान

५. (अ) 'निराला' जी का मूल नाम –

(आ) हिंदी के कुछ आलोचकों द्‌वारा महादेवी वर्मा को दी गई उपाधि –

रस

काव्यशास्त्र में आचार्यों ने रस को काव्य की आत्मा माना है । विभाव, अनुभाव, व्यभिचारी (संचारी) भाव और स्थायी भाव रस के अंग हैं और इन अंगों अर्थात तत्त्वों के संयोग से रस की निष्पत्ति होती है ।

साहित्यशास्त्र में नौ प्रकार के रस माने गए हैं । कालांतर में अन्य दो रसों को सम्मिलित किया गया है ।

रस	–	स्थायी भाव	रस	–	स्थायी भाव
(१) शृंगार	–	प्रेम	(७) भयानक	–	भय
(२) शांत	–	शांति	(८) बीभत्स	–	घृणा
(३) करुण	–	शोक	(९) अद्‌भुत	–	आश्चर्य
(४) हास्य	–	हास	(१०) वात्सल्य	–	ममत्व
(५) वीर	–	उत्साह	(११) भक्ति	–	भक्ति
(६) रौद्र	–	क्रोध			

ग्यारहवीं कक्षा की युवकभारती पाठ्यपुस्तक में हमने करुण, हास्य, वीर, भयानक और वात्सल्य रस के लक्षण एवं उदाहरणों का अध्ययन किया है । इस वर्ष हम शेष रसों – रौद्र, बीभत्स, अद्‌भुत, शृंगार, शांत और भक्ति रस का अध्ययन करेंगे ।

रौद्र रस : जहाँ पर किसी के असह्य वचन, अपमानजनक व्यवहार के फलस्वरूप हृदय में क्रोध का भाव उत्पन्न होता है; वहाँ रौद्र रस उत्पन्न होता है । इस रस की अभिव्यंजना अपने किसी प्रिय अथवा श्रद्‌धेय व्यक्ति के प्रति अपमानजनक, असह्य व्यवहार के प्रतिशोध के रूप में होती है ।

उदा. – (१) श्रीकृष्ण के वचन सुन, अर्जुन क्रोध से जलने लगे ।
सब शोक अपना भूलकर, करतल युगल मलने लगे ।

(२) कहा – कैकयी ने सक्रोध
दूर हट ! दूर हट ! निर्बोध !
द्‌विजिव्हे रस में, विष मत घोल ।

बीभत्स रस : जहाँ किसी अप्रिय, अरुचिकर, घृणास्पद वस्तुओं, पदार्थों के प्रसंगों का वर्णन हो, वहाँ बीभत्स रस उत्पन्न होता है ।

उदा. – (१) सिर पर बैठो काग, आँखि दोऊ खात
खींचहि जींभहि सियार अतिहि आनंद उर धारत ।
गिद्‌ध जाँघ के माँस खोदि-खोदि खात, उचारत हैं ।

(२) सुडुक, सुडुक घाव से पिल्लू (मवाद) निकाल रहा है,
नासिका से श्वेत पदार्थ निकाल रहा है ।